आर्थिक प्रगति में शुचितापूर्ण नीतियों का अपनाया जाना जरूरी

हाल ही के समय में भारत के आर्थिक विकास की दर में बहुत तेजी आती दिखाई दे रही है एवं आगे आने वाले समय में आर्थिक प्रगति की गति और अधिक तेज होने की उम्मीद की जा रही है। किसी भी क्षेत्र में बहुत तेजी से आगे बढ़ने के अपने लाभ भी हैं और नुक्सान भी। आर्थिक क्षेत्र में प्रगति करते समय इसका ध्यान रखा जाना बहुत जरूरी है कि इस संदर्भ में प्रगति के लिए जो नीतियां अपनायी जा रही हैं वे जनता की अपेक्षाओं को पूरा करती हैं। साथ ही, देश में आर्थिक विकास को गति देने के लिए गल्त आर्थिक नीतियों को लागू नहीं किया जाय क्योंकि गल्त आर्थिक नीतियों को अपनाते हुए आर्थिक स्त्रोतों को बढ़ाना देश एवं जनता के हित में नहीं होता है। आर्थिक प्रगति के इस खंडकाल में इस बात पर भी विशेष ध्यान देना जरूरी है कि भारत की आर्थिक प्रगति में शुचितापूर्ण नीतियों का पालन किया जा रहा है।

आर्थिक प्रगति किसी भी कीमत पर हो एवं चाहे इसके लिए भविष्य में देश के नागरिकों को भारी कीमत चुकानी पड़े, इसे भारतीय संस्कार मंजूर नहीं करते हैं। भारत को परम वैभव के स्तर पर ले जाने के लिए धर्म के मार्ग पर चलना ही हितकर होगा। विश्व के अन्य कई देशों में जब आर्थिक विकास की गति तेज हुई है एवं इन देशों ने विकसित देशों की श्रेणी का दर्जा प्राप्त किया है, इस दौरान इन देशों में कई प्रकार की नैतिक, सामाजिक एवं आर्थिक समस्याएं गल्त आर्थिक नीतियों को अपनाने के कारण पनपी हैं, जिनका हल ये देश आज भी नहीं निकल पा रहे हैं। इसलिए भारत को अपनी आर्थिक नीतियों को लागू करते समय अभी से सतर्क रहना जरूरी है ताकि भविष्य में इस प्रकार की समस्याएं भारत में निर्मित ही न हो।

आज अमेरिका, यूरोप एवं अन्य कई देश विभिन्न प्रकार की आर्थिक, नैतिक एवं सामाजिक समस्याओं का सामना कर रहे हैं एवं इन समस्याओं को हल करने में अपने आप को असमर्थ पा रहे हैं। दरअसल विकास का जो मॉडल इन देशों ने अपनाया हुआ है, इस मॉडल में स्पष्ट रूप से दिखाई दे रहे कई छिद्रों को भर नहीं पाने के कारण इन देशों में कई प्रकार की समस्याएं बद से बदतर होती जा रही है। जैसे नैतिक एवं मानवीय मूल्यों में लगातार ह्रास होते जाना, सुख एवं शांति का अभाव होते जाना, इन देशों में निवास कर रहे लोगों में हिंसा की प्रवृति विकसित होना एवं मानसिक रोगों का फैलना, मुद्रा स्फीति, आय की बढ़ती असमानता, बेरोजगारी, ऋण का बढ़ता बोझ, घाटे की वित्त व्यवस्था, प्राकृतिक संसाधनों का तेजी से क्षरण होना, ऊर्जा का संकट पैदा होना, वनों के क्षेत्र में तेजी से कमी होना, प्रतिवर्ष

जंगलों में आग का लगना, भूजल का स्तर तेजी से नीचे की ओर चले जाना, जलवायु एवं वर्षा के स्वरूप में लगातार परिवर्तन होते रहना, आदि। इन सभी समस्याओं के मूल में विकसित देशों द्वारा आर्थिक विकास के लिए अपनाए गए पूंजीवादी मॉडल को माना जा रहा है।

वैसे तो पूंजीवादी मॉडल में कई प्रकार की कमियां दिखाई देने लगी हैं परंतु हाल ही के समय की एक ज्वलंत आर्थिक समस्या का वर्णन करना यहां उचित होगा। विशेष रूप से कोरोना महामारी के खंडकाल के पश्चात एवं रूस यूक्रेन युद्ध के चलते आपूर्ति कड़ियों में उत्पन्न हुई समस्याओं के चलते विश्व के लगभग सभी देश मुद्रा स्फीति की गम्भीर समस्या का सामना कर रहे हैं।

लगभग सभी देश, पूंजीवादी मॉडल के अनुसार, ब्याज दरों में लगातार वृद्धि कर उत्पादों की मांग बाजार में कम करते हुए मुद्रा स्फीति की समस्या से निजात पाने का प्रयास कर रहे हैं। परंतु, पिछले एक वर्ष से लगातार किए जा रहे इस प्रयास से मुद्रा स्फीति की समस्या से छुटकारा मिलता दिखाई नहीं दे रहा है। ब्याज दर के लगातार बढ़ाते जाने से कई अर्थव्यवस्थाओं में मुद्रा स्फीति तो नियंत्रण में नहीं आ पा रही है परंतु अन्य कई प्रकार की आर्थिक समस्याएं जरूर उभर रही हैं। जैसे, कम्पनियों के व्यवसाय में कमी होना, लाभप्रदता में कमी होना, कर्मचारियों की छंटनी होना, करों के संग्रहण में कमी होना एवं बेरोजगारी का बढ़ना, देश की विकास दर में कमी आना, आदि। इस कारण से अब यह सोचा जाना चाहिए कि इन परिस्थितियों में मुद्रा स्फीति को नियंत्रित करने के लिए ब्याज दरों का बढ़ाते जाना क्या सही उपाय है

इस तरह के उपाय पूर्व में विकसित अर्थव्यवस्थाओं, जिन्होंने पूंजीवादी मॉडल के अनुसार अपने आर्थिक विकास को आगे बढ़ाने का निर्णय लिया है, द्वारा किए जाते रहे हैं। जबकि, अब यह उपाय बोथरे साबित हो रहे हैं। मुद्रा स्फीति के लगातार बढ़ते जाने के बीच विकसित देशों में कई कम्पनियों ने अपने की कर्मचारियों की छंटनी जैसे अमानवीय निर्णय लेने में जरा भी हिचक नहीं दिखाई है और 2 लाख से अधिक कर्मचारियों की छंटनी इन कम्पनियों द्वारा की जा रही है।

इसी प्रकार, विश्व में आज ऐसे कई देश हैं जिनके 20 प्रतिशत नागरिकों के पास देश की 80 प्रतिशत से अधिक सम्पत्ति जमा हो गई है ; जबकि 80 प्रतिशत नागरिकों के पास देश की केवल 20 प्रतिशत से भी कम संपत्ति है। आज बहुराष्ट्रीय कम्पनियां उत्पादों पर कितना लाभ लेती हैं, इसकी कोई सीमा ही नहीं है। इन कारणों के चलते ही आज विभिन्न देशों के आर्थिक विकास के साथ साथ अमीर व्यक्ति अधिक अमीर होता जा रहा है और गरीब व्यक्ति और अधिक गरीब होता जा रहा है। आज अमेरिका जैसे विश्व के सबसे अमीर देश में भी लगभग 6 लाख व्यक्ति ऐसे हैं जिनके पास रहने के लिए घर नहीं है और वे खुले में रहने को मजबूर हैं।

आय की असमानता के रूप में यही हाल लगभग सभी विकसित देशों का है। अमेरिका की कुल आबादी के 11.4 प्रतिशत नागरिक, जापान में 15.7 प्रतिशत नागरिक एवं जर्मनी में 15.5 प्रतिशत नागरिक गरीबी रेखा के नीचे जीवन यापन कर रहे हैं। लगभग यही स्थिति अन्य विकसित देशों की भी है।

इसके ठीक विपरीत, भारत के बहुत पुराने समय के इतिहास में महंगाई नामक शब्द का वर्णन ही नहीं मिलता है। क्योंकि ग्रामीण इलाकों में कुटीर उद्योगों के माध्यम से वस्तुओं का उत्पादन प्रचुर मात्रा में

किया जाता था एवं वस्तुओं की आपूर्ति सदैव ही सुनिश्चित रखी जाती थी अत: मांग एवं आपूर्ति में असंतुलन पैदा ही नहीं होने दिया जाता था। भारत ने भी हाल ही में हालांकि ब्याज दरों में वृद्धि की है परंतु विशेष रूप से कृषि उत्पादों की आपूर्ति पर विशेष ध्यान देते हुए महंगाई को तुलनात्मक रूप से नियंत्रण में बनाए रखा है।

इसी प्रकार, अन्य विकसित देशों द्वारा भी लगातार ब्याज दरों में वृद्धि करने के स्थान पर उत्पादों की आपूर्ति बढ़ाकर मुद्रा स्फीति का हल निकाला जाना चाहिए। विशेष रूप से मुद्रा स्फीति की समस्या उत्पन्न ही इसलिए होती है कि सिस्टम में उत्पादों की मांग की तुलना में आपूर्ति कम होने लगती है। कोरोना महामारी के दौरान एवं उसके बाद रूस एवं यूक्रेन युद्ध के कारण कई देशों में कई उत्पादों की आपूर्ति बाधित हुई है। जिसके कारण मुद्रा स्फीति इन देशों में फैली है।

दरअसल पश्चिमी दर्शन भौतिकता प्रधान है और वहां व्यक्ति ही प्रधान है इसलिए वहां असीम उपभोगवाद है। अत: पश्चिमी व्यक्ति तात्कालिक शारीरिक सुख को ही प्रधानता देता है। शारीरिक सुख प्राप्त करने के लिए वह मानता है कि उसके लिए कुछ भी करना उचित है, चाहे वह जायज हो अथवा नाजायज। इसके कारण पश्चिम में अर्थ रचना ऐसी है कि जिसके माध्यम से सभी नागरिकों, विशेष रूप से गरीब वर्ग को लाभ हो अथवा न हो परंतु कुछ व्यक्तियों, वर्गों अथवा समुदायों को समस्त प्रकार की सुख सुविधाएं जरूर मिलती है, उनकी पूंजी बढ़ती है, उनका मुनाफा बढ़ता है। पश्चिमी संस्कृति एवं उनके दर्शन का अर्थशास्त्र पर परिणाम यह होता है कि व्यक्तिगत उपभोग, व्यक्तिगत लाभ के कारण पश्चिमी लोगों में शोषण करने की प्रवृत्ति बढ़ती है जिससे पश्चिम की सारी अर्थव्यवस्था प्रभावित होती है।

पश्चिमी दर्शन के ठीक विपरीत भारतीय दर्शन में सम्पूर्ण अस्तित्व, ब्रह्मांड या विश्व को एकात्म भाव से देखने का वर्णन है। प्राचीन भारत में अर्थ रचना ऐसी रही है जिससे देश के सभी नागरिक सम्पन्न एवं सुखी रहे हैं। भारतीय शास्त्रों में संयमित उपभोग की बात कही गई है। भारत में प्राणी तथा वनस्पति का विचार भी आत्मीयता के साथ किया जाता रहा है। भारत में सर्वसाधारण सोचता रहा है कि अर्थ अर्थात सम्पत्ति का विचार सभी मानवों के लिए समान है। भारतीय परम्परा में यह विचार भी है कि देश में जितनी वस्तुएं हैं, जितनी सुविधाएं हैं, यह सब कुल मिलाकर देश की सम्पत्ति, 'अर्थ' है। भारत में इन विचारों को व्यावहारिक स्तर पर लागू किया जाता रहा है।

परंतु, वर्तमान में भारत में भी आर्थिक दृष्टि से कुछ कमियां तो स्पष्ट रूप से दिखाई दे रही हैं, जिन्हें ठीक करना नितांत आवश्यक है। भारत में निचले स्तर की 20 प्रतिशत जनसंख्या की आय देश की कुल आय का 5 प्रतिशत है जबकि ऊपरी स्तर के 20 प्रतिशत जनसंख्या की आय देश की कुल आय का लगभग 50 प्रतिशत है।

भारत में जनवरी 2023 में बेरोजगारी की दर 7.14 प्रतिशत थी, जबकि आदर्श स्थिति में यह शून्य के स्तर पर होनी चाहिए। भारत में गरीबी की रेखा से नीचे जीवन यापन कर रहे व्यक्तियों की संख्या वर्ष 2019 में 10.2 प्रतिशत थी। भारत में प्रति व्यक्ति आय अन्य कई देशों की तुलना में बहुत कम है। प्रत्येक भारतीय की औसत आय 2,200 अमेरिकी डॉलर प्रति वर्ष है जबकि अमेरिका में प्रति व्यक्ति

औसत आय 70,000 अमेरिकी डॉलर प्रति वर्ष है और चीनी नागरिक की औसत आय 12,000 अमेरिकी डॉलर प्रति वर्ष है।

भारत में अर्थ से सम्बंधित प्राचीन ग्रंथों, आध्यात्मिक ग्रंथों सहित, में यह भी कहा गया है कि यह राजा का कर्तव्य है कि वह अपनी प्रजा की अर्थ से सम्बंधित समस्याओं का हल खोजने का प्रयास करे। पंडित श्री दीनदयाल उपाध्याय जी ने भी कहा है कि किसी भी राजनैतिक दल के लिए केवल राजनैतिक सत्ता हासिल करना अंतिम लक्ष्य नहीं होना चाहिए बल्कि यह एक माध्यम बनना चाहिए इस बात के लिए कि देश के गरीब से गरीब व्यक्ति तक आर्थिक विकास का लाभ पहुंचाया जा सके। श्री उपाध्याय ने इस संदर्भ में एक मॉडल भी दिया है जिसे उन्होंने "एकात्म मानववाद" का नाम दिया है।

इस मॉडल के क्रियान्वयन से समाज के अंतिम छोर पर खड़े व्यक्ति का विकास होगा। उसका सर्वांगीण उदय होगा। उक्त मॉडल को साम्यवाद, समाजवाद, पूंजीवाद या साम्राज्यवाद आदि से हटाकर राष्ट्रवाद का धरातल दिया गया है। भारत का राष्ट्रवाद विश्व कल्याणकारी है क्योंकि उसने "वसुधैव कुटुम्बकम" की संकल्पना के आधार पर "सर्वे भवन्तु सुखिन :" को ही अपना अंतिम लक्ष्य माना है। यही हम सभी भारतीयों का लक्ष्य बनना चाहिए।

इस प्रकार भारत को अपनी आर्थिक तरक्की के समय पश्चिमी दर्शन के स्थान पर भारतीय दर्शन को अपनाकर आगे बढ़ना चाहिए, ताकि पश्चिमी देशों में उत्पन्न हुई नैतिक, आर्थिक एवं सामाजिक समस्याओं से आर्थिक विकास के शुरूआती दौर में ही बचा जा सके।

प्रहलाद सबनानी
सेवा निवृत्त उप महाप्रबंधक,
भारतीय स्टेट बैंक
के-8, चेतकपुरी कालोनी,
झांसी रोड, लश्कर,
ग्वालियर – 474 009
मोबाइल क्रमांक – 9987949940
ई-मेल - psabnani@rediffmail.com